बकरी पालन

पुनीत कुमार

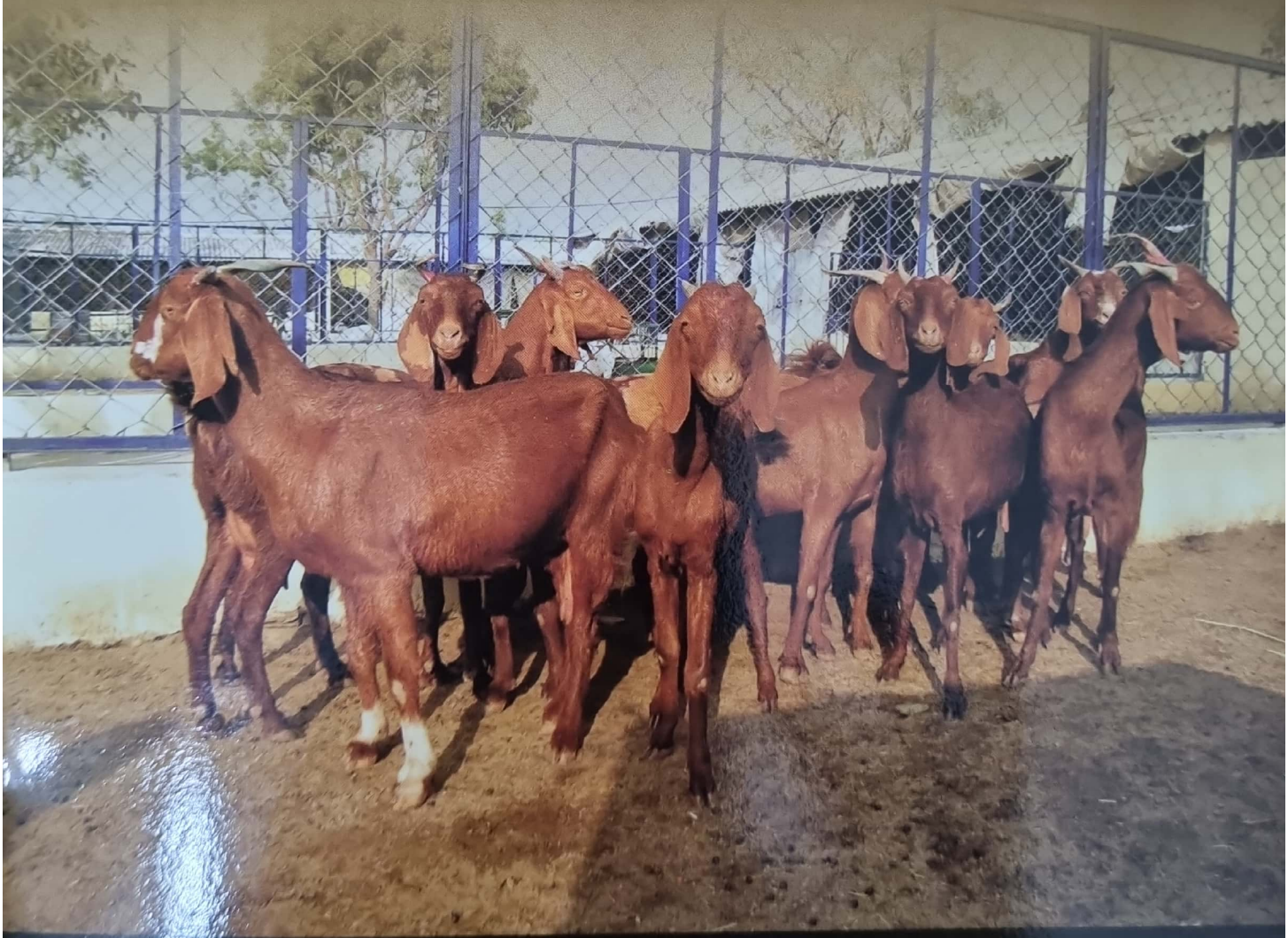

कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केन्द्र
संयुक्त निदेशालय (प्रसार शिक्षा)
भारतीय पशुचिकित्सा अनुसंधान संस्थान
इज्जतनगर-243122 (उ.प्र.)

बकरी पालन

पुनीत कुमार*

बकरी पालन का महत्व

खेती के साथ–साथ एक या एक से अधिक पशुधन रखने की परम्परा बहुत पुरानी है। बड़े व मध्यम किसान बड़े पशु पालने में रूचि रखते हैं, लेकिन भूमिहीन, सीमान्त व लघु किसान अधिकतर बकरी पालते हैं। इन सीमित संसाधनों वाले ग्रामीणों के जीवन निर्वहन व खाद्य सुरक्षा में बकरी की भूमिका महत्वपूर्ण है। कम वर्षा व कम उपजाऊ जमीन में तुलनात्मक रूप से बकरी पालन करना अधिक लाभदायक होता है। ऐसे क्षेत्रों में छोटी जोत वाले कृषकों, मजदूरों, गरीबों को बकरी पालन से रोजगार मिलता है। गरीब परिवार के बच्चे या औरतें बकरी के झुण्ड को लेकर सड़क व नहरों के किनारे या अन्य बेकार भूमि पर चराने ले जाते हैं। जिसमें किसी लागत की आवश्यकता नहीं पड़ती। पारम्परिक तौर पर बकरी पोषण के लिये पंचायती चरागाहों व अन्य सार्वजनिक चारा स्रोतों पर निर्भर करती है। चराने के साथ–साथ बकरियों को पेड़ों की पत्तियां भी खिलायी जाती हैं। बकरी से आमदनी का साधन दूध, उनके बच्चों की बिक्री व खाद आदि हैं। इस सम्बन्ध में अनुसंधान व सर्वेक्षण में पाया गया है कि बकरीपालक परिवार को एक बकरी से औसतन रू. 1302 से रू. 1873 प्रति वर्ष शुद्ध आय प्राप्त हो जाती है। ग्रामीण क्षेत्रों में किये गये सर्वेक्षण से स्पष्ट हुआ है कि बकरी पालन के कार्यकलापों में महिलाओं का योगदान विशेष महत्वपूर्ण होता है। बकरी को चराना, घास काट कर लाना, चारा डालना, पानी पिलाना, बाड़े की सफाई करना, ब्यॉते समय मदद करना आदि अधिकांश कार्य महिलाओं द्वारा सम्पन्न किये जाते हैं।

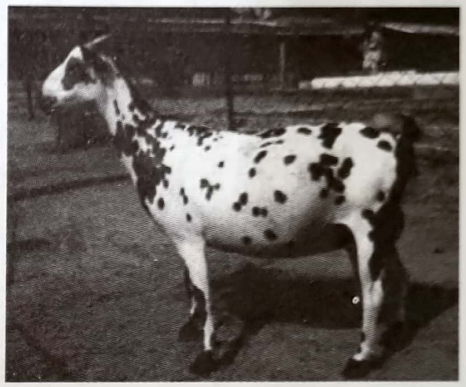

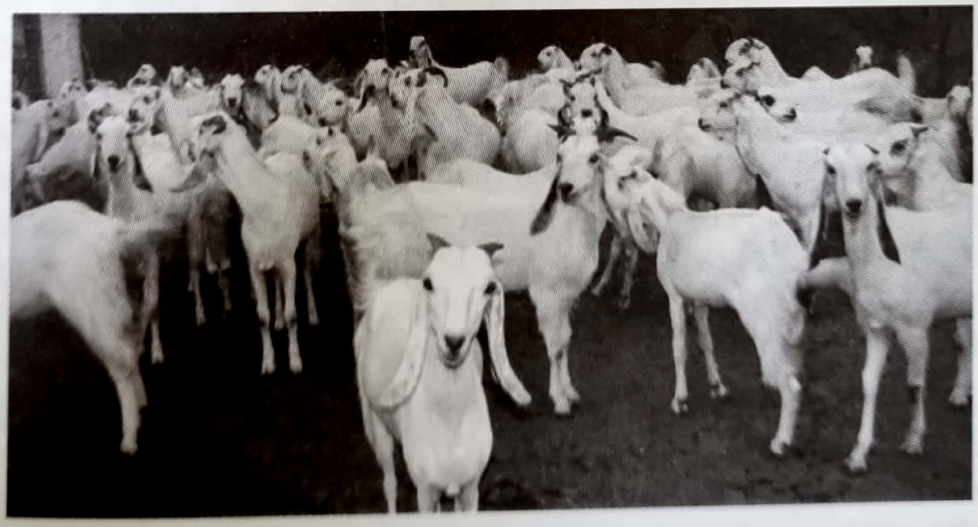

*प्रधान वैज्ञानिक, दैहिकी एवं जलवायुकी विभाग

Scanned with OKEN Scanner

वास्तव में बकरी पालन रोजगार का बहुत ही उपयोगी विकल्प है। कम पूँजी से प्रारम्भ होने वाला यह व्यवसाय, डेयरी फार्म की तुलना में कम जोखिम भरा व अधिक लाभ देने वाला है। आज की बढ़ती हुई मँहगाई में जब गाय व भैंसों की कीमत व उनके पालने का खर्च बहुत अधिक है, बकरी पालन ग्रामीण बेरोजगारों के लिये रोजगार का एक अच्छा साधन है। बकरियों की अपनी कुछ विशेषताओं जैसे–सीधा स्वभाव व छोटा आकार, रख रखाव में आसानी, अधिक बच्चे देने की क्षमता, किसी भी वातावरण के अनुरूप ढलने की क्षमता के कारण बकरी पालन बड़े पैमाने पर व्यवसाय का रूप लेता जा रहा है। बकरी को सभी वर्ग व जाति के लोग पालते हैं व इसके माँस खाने पर भी कोई धार्मिक निषेधता नहीं है। ग्रामीण जनसंख्या का बहुत बड़ा भाग जो गरीब है, बकरी के दूध का उपयोग करता है। बकरी का दूध गाय व भैंस के दूध की तुलना में मानव दूध से अधिक मिलता–जुलता है। इसका दूध सुपाच्य व ताकतवर होता है। बच्चे, वृद्ध एवं रोगी व्यक्ति जो भैंस के दूध को आसानी से पचा नहीं पाते उन्हें बकरी का दूध पीने की सलाह दी जाती है। बकरी के दूध में वसा कणों का आकार छोटा होने के कारण यह आसानी से पच जाता है। इसके दूध में औसतन 4 प्रतिशत प्रोटीन होती है। देश में बकरी के माँस की माँग लगातार बढ़ रही है।

चूँकि भारतीय बकरियाँ प्राकृतिक चरागाहों पर निर्भर रहती हैं, इसलिये इनके माँस में पेस्टीसाइड व अन्य रसायन रहने की संभावना बहुत कम रहती है। साथ ही भारतीय बकरियों का माँस अधिक स्वादिष्ट होता है जो कि वसा व ऊर्जा संवेदी उपभोक्तओं द्वारा अधिक पसन्द किया जाता हे। इसलिये बकरी माँस की माँग अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में निरन्तर बढ़ रही है।

बकरी की खालें बाल रहित चमड़े के लिये उपयोग की जाती हैं। इनसे महिलाओं के हाथ के दस्ताने, सजावटी जूते व स्लिपर के ऊपरी भाग व महीन दानेदार मराको चमड़ा तैयार किया जाता है। अन्तर्राष्ट्रीय बाजार के लिये जूतों के ऊपरी भाग के लिये ग्लेज–किड नामक चमड़ा, दस्ताना चमड़ा, रोलर–स्किन आदि किस्मों के चमड़े भी तैयार किये जाते हैं। बकरियों के चमड़े की माँग अंतर्राष्ट्रीय बाजार में उच्च स्तर पर है।

बकरियों पर लगाया गया यह आक्षेप कि ये जंगल को नष्ट करती हैं या भूमिक्षरण को बढ़ावा देती हैं पूरी तरह से सत्य नहीं है। बकरियां भूमिक्षरण, वन हानि या पर्यावरण की अवनति के लिये जिम्मेदार नहीं हैं। बल्कि यह अनउपजाऊ भूमि को उपजाऊ बनाने में मदद करती हैं। देखा गया है कि बकरियाँ कुछ चारे वाली घासों व पेड़ों का बीज खाकर उसको अपनी मेंगनी के साथ चरागाह व जंगल में फैला देती है। कठोर परत वाले बीज भी बकरी के पाचन तंत्र से गुजरते समय मुलायम हो जाते हैं और वर्षा के मौसम में आसानी से अंकुरित हो जाते हैं। भूमि का क्षरण मुख्यतः भूमि के कुप्रबन्ध या बड़े जानवरों के द्वारा अधिक चराई के कारण होता है। इस प्रकार पर्यावरण को हानि पहुंचाने के लिये बकरियाँ नहीं बल्कि स्वयं मनुष्य उत्तरदायी है।

वर्तमान उत्पादन एवं विभिन्न उत्पादों के बाजार भाव के आँकड़ों के अनुसार बकरियों का भारतीय अर्थव्यवस्था में लगभग 15 हजार करोड़ रुपये का योगदान है। आय के विभिन्न स्रोतों में सर्वाधिक योगदान माँस (6851 करोड़ रुपये) के रुप में होता है। द्वितीय स्थान दूध (4588 करोड़ रुपये) का तथा तृतीय स्थान उपउत्पादों (1209 करोड़ रुपये) का है। इनसे प्राप्त खाद (1032.66 करोड़ रुपये) का चौथा स्थान व चमड़े

Scanned with OKEN Scanner

(648.40 करोड़ रुपये) का पाँचवा स्थान है। हिमालयन क्षेत्र की चाँगथांगी तथा चेगू बकरियों से प्राप्त उच्चकोटि के पश्मीना रेशे की भागीदारी अपेक्षाकृत कम है।

बकरी को एशिया महाद्वीप का पशुधन कहा जाता है क्योंकि 95 प्रतिशत बकरी एशिया महाद्वीप के विकासशील देशों में ही पाई जाती हैं। उपभोक्ताओं द्वारा बकरी के माँस को अधिकतम वरीयता दी जाती है क्योंकि अन्य जानवरों के माँस की तरह बकरियों के माँस में कोई धार्मिक भावना नहीं जुड़ी है। कम उत्पादन के कारण बकरी का माँस हमारे घरेलू बाजार में सबसे मँहगा है। बकरी पालन में अच्छी आर्थिक सम्भावनों के मद्देनजर, बहुत से प्रगतिशील किसान, बड़े व्यवसायी एवं तकनीकी लोग व्यवसायिक बकरी पालन के लिए आगे आ रहे हैं। भारतीय बकरी की नस्लों का प्रादुर्भाव प्राकृतिक चयन द्वारा विशिष्ट जलवायु एवं परिस्थितियों के अनुकूलन से हुआ है, जिससे यहाँ पाई जाने वाली अधिकांश नस्लें कठिन जलवायु में प्रवास तथा कटिबंधीय बीमारियों, अल्पपोषण व पानी की कमी जैसी विषम परिस्थितियों के लिए पूर्णतया अनुकूलित हैं।

भारतीय बकरियों की 20 प्रमुख नस्लें हैं। ये मोटे तौर पर बड़ी, मध्यम और छोटी नस्लों के रुप में विभाजित की गयी हैं। बड़े आकार की नस्लें जैसे जमुनापारी, बीटल, जखराना, आदि दूध वाली नस्लों के रुप में जानी जाती हैं। मध्यम आकार की नस्लें जैसे– बरबरी, उस्मानाबादी, मारवाड़ी आदि द्विकाजी नस्लें हैं जो माँस व दूध दोनों के लिए जानी जाती है। छोटे आकार की नस्लें जैसे– बंगाल, मुख्यतया माँस के लिए जानी जाती हैं। बकरी एक ऐसा पशु है जो विभिन्न नस्लों के रुप में हिमालय की ऊँची पहाड़ियों से लेकर राजस्थान के मरुक्षेत्र, पठारी भाग व समुद्र तटीय जलवायु सभी स्थानों पर सफलतापूर्वक पाली जाती हैं। खाद्य एवं कृषि संगठन (2007) के अनुसार विश्व में बकरियों की संख्या 85.02 करोड़ है, जिनमें से 12.54 करोड़ बकरियाँ भारत में हैं। यह विश्व की कुल आबादी का 14.75 प्रतिशत है।

भारत में बकरी पालन के सामाजिक व आर्थिक महत्व का सबसे बड़ा प्रमाण इनकी संख्या में 3.4 प्रतिशत वार्षिक वृद्धि है, जबकि प्रतिवर्ष लगभग 42 प्रतिशत बकरियों को माँस हेतु उपयोग में लिया जा रहा है। यह सर्वविदित है कि किसी कारण से खेती विफल होने की स्थिति में पशु पालन द्वारा अर्जित अर्थ से पारिवारिक जोखिम कम किया जा सकता है। उसमें भी बकरी पालन की अहम् भूमिका हो सकती है। भारत व एशिया के अनेक देशों में प्रचलित सीमान्त एवं छोटी किन्तु जटिल कृषि प्रणालियों के स्थायित्व में बकरियाँ खाद व अतिरिक्त आय सुलभ कराकर महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। ग्रामीण निर्धनों का एक बड़ा भाग वेस्टइन्डीज, वैनेजुला, मैक्सिको, ईरान, अफगानिस्तान, पाकिस्तान, नेपाल और भारत जैसे देशों में अपने जीवन निर्वाह हेतु पूर्णतया इन पर निर्भर हैं। कृषि और पशु–चराकर निर्वाह करने वाले समाज में बकरियों को निवेश के निश्चित श्रोत तथा किसी आकस्मिक संकट के विरुद्ध बीमे के रुप में पाला जाता है। बकरियों से प्राप्त खाद एशिया के लगभग सभी विकासशील देशों में भूमि उर्वरकता बनाये रखने में मूल्यवान योगदान दे रही है।

आर्थिक दृष्टि से लाभदायक अन्य पशुओं की तुलना में बकरी पालन के अधिक प्रचलित होने के सन्दर्भ में उनकी निम्नलिखित विशेषतायें उल्लेखनीय हैः–

1. कम पूँजी की आवश्यकता।
2. रखने के लिए कम स्थान की आवश्यकता।

Scanned with OKEN Scanner

3. कम मात्रा में दाने–चारे की आवश्यकता।
4. कम आयु पर प्रजनन शुरू करने के गुण।
5. हर ब्याँत में औसतन एक से अधिक बच्चे देना।
6. आवास की विशेष सुविधा की आवश्यकता न होना।
7. कम गुणवत्ता वाले चारे को पचाने की अदभुत क्षमता रखना।
8. सभी प्रकार की जलवायु में सफलतापूर्वक अनुकूलन की क्षमता।
9. समस्या रहित विपणन अर्थात् कम लागत के कारण कभी भी खरीद एवं बिक्री की जा सकती है।
10. बकरी के माँस की अधिक माँग का होना।
11. कम जोखिम।

भारतवर्ष में बकरियों की नस्लें

भारतवर्ष में बकरियों की 20 नस्लें पाई जाती हैं।

उत्तरी ठण्डा क्षेत्र– इसके अन्तर्गत जम्मू–कश्मीर, हिमाचल प्रदेश व उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्र आते हैं। यहाँ की मुख्य नस्लें गद्दी, चियांगथाँगी व चेगू हैं। इस क्षेत्र की बकरियाँ रेशा (पश्मीना) व माँस उत्पादक होती हैं।

उत्तर–पश्चिमी शुष्क क्षेत्र– इसके अन्तर्गत राजस्थान, पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, गुजरात व मध्य प्रदेश के शुष्क व अर्द्धशुष्क क्षेत्र आते हैं। इस क्षेत्र की मुख्य नस्लें सिरोही, मारवाड़ी, जखराना, बीटल, बरबरी, जमुनापारी, मेहसाना, गोहिलवाड़ी, झालावाड़ी, कच्छी व सूरती हैं। ये नस्लें दूध व माँस उत्पादन में अच्छी होती हैं।

दक्षिणी क्षेत्र– इसके अन्तर्गत महाराष्ट्र, आन्ध्र प्रदेश, केरल, कर्नाटक तथा तमिलनाडु प्रदेशों के भाग आते हैं। इस क्षेत्र की नस्लें मुख्यतः संगमनेरी, उस्मानावादी व मालावारी हैं। ये नस्लें मुख्यतः माँस उत्पादक होती हैं।

पूर्वोत्तर क्षेत्र– इसके अन्तर्गत बिहार, पश्चिमी बंगाल, उड़ीसा असम और देश के पूर्वोत्तर राज्य आते हैं। यहाँ पर बकरियों की दो नस्लें गंजम और बंगाल है। बंगाल नस्ल जनन क्षमता व मांस उत्पादन में विश्व प्रसिद्ध हैं।

बकरी पालन की पद्धतियाँ

1. *सघन पद्धति–* यह पद्धति उन क्षेत्रों के लिये उपयुक्त है जहाँ बकरियों के चराने के लिये पर्याप्त चरागाह उपलब्ध नहीं हैं। इस पद्धति में बकरियेां को फार्म अथवा घर पर रखकर ही उनकी चारे–दाने की सभी आवश्यकताओं को पूरा किया जाता है। इसे जीरो ग्रेजिंग पद्धति भी कहते हैं। अन्य पद्धतियों की तुलना में इस विधि के अनुसार बकरी पालन करने पर बकरियों से उनकी आनुवंशिक क्षमता के अनुरूप उत्पादन लिया जाना सम्भव है।
2. *अर्द्धसघन पद्धति–* बकरी पालन की यह पद्धति उन परिस्थितियों के लिये अनुकूल है जब चरागाह की सुविधा केवल सीमित क्षेत्रों में उपलब्ध हो साथ ही उनमें चारे की उपलब्धता भी आवश्यकता से कम हो। ऐसी दशा में चरागाह का उपयोग बकरियों को सीमित समय के लिये चराने के लिये किया जाता है जिससे पूरे वर्ष चरने की सुविधा बनी रहे। इस तरह बकरियों के आहार की पूर्ति सीमित चराई के

Scanned with OKEN Scanner

साथ–साथ उनको फार्म/घर पर पूरक आहार के रूप में आवश्यकतानुसार दाना तथा सूखा चारा उपलब्ध कराकर पूरी की जाती है। इस पद्धति में बकरियों के उत्पादन का स्तर चरागाह में उपलब्ध चारे तथा पूरक आहार की मात्रा एवं गुणवत्ता पर निर्भर करती है।

3. *विस्तीर्ण चारण पद्धति–* इस पद्धति में बकरियों को केवल चराकर ही पाला जा सकता है। यदि चरागाहा अच्छी गुणवत्ता वाले हैं तो बकरियों को आवास पर अलग से चारा व दाने की आवश्यकता नहीं होती है। उनकी जरूरतें चरागाहों से ही पूरी हो जाती है। इस पद्धति में प्रबन्धन तो आसान होता है परन्तु यह देखा गया है कि बकरियों का उत्पादन उस अनुरूप में नहीं हो पाता है जितनी बकरियों की क्षमता होती है।

बकरियों में गर्मी (हीट) के लक्षण

- पूंछ को बार–बार हिलाना।
- बेचैन होना तथा दाना–चारा कम खाना।
- बार–बार पेशाब करना।
- झुण्ड में दूसरी मादा बकरियों पर चढ़ना।
- बकरे को सम्भोग के लिये स्वीकृति देना।
- बकरी की योनि का लाल होकर चिकनी व लसीली होना।
- योनि मार्ग से पारदर्शी योनिद्रव्य का निकलना।
- मिमयाना व चौकन्ना हो जाना आदि हैं।

योनि मार्ग से थोड़ी मात्रा में पारदर्शी तोड़ (योनि–द्रव्य) गिरता है। योनि द्रव्य मदकाल के आरम्भ में कम व पतला, मध्यावस्था में अधिक व पारदर्शी और अन्त में गाढ़ा तथा सफेद होता जाता है। बकरी सामान्य अवस्था में 24–36 घण्टे तक मदकाल (गर्मी) में रहती है और इसी सीमित अवधि में गर्भाधान कराने पर गर्भधारण करती है। बकरियों में मदकाल का पता करने के लिये एक टीजर बकरे को 50–60 बकरियों के झुंड में सुबह–शाम रोजाना आधा घण्टे घुमायें। मदकाल में आई बकरियों की मदकाल (गर्मी) में आने के 10–12 घण्टे बाद गाभिन कराना चाहिये। अगर बकरी 24 घण्टे बाद भी गर्मी के लक्षण प्रकट करती है तो दोबारा 10–12 घण्टे के अन्तराल पर भी गाभिन कराया जाये। गर्भ न ठहरने की स्थिति में बकरियाँ 19–21 दिन के अन्तराल पर बार–बार गर्मी (मदकाल) में आती रहती हैं।

गर्भ की समय से जाँच

गाभिन करायी गयी प्रत्येक बकरी का उचित समय पर गर्भ परीक्षण आवश्यक है। बकरियों में गर्भकाल की अवधि पाँच माह (145–155 दिन) होती है। यह आवश्यक नहीं कि प्रत्येक गाभिन कराये गये पशु में गर्भ ठहर ही जाये। गर्भ की समय से जाँच न होने का दोहरा नुकसान है। एक तो समय से गर्भ निदान के अभाव में बकरियों को गर्भावस्था में उचित आहार नहीं मिल पाता है जिससे गर्भपात की सम्भावना बढ़ जाती है और कमजोर बच्चे पैदा होते हैं। दूसरे, खाली (बगैर गाभिन) बकरियों के रखरखाव में अनावश्यक खर्चा होता है तथा बकरी पालन में अपेक्षित लाभ नहीं होता है।

Scanned with OKEN Scanner

गर्भावस्था एवं प्रसव

गर्भावस्था में बकरियों की उचित देखभाल तथा संतुलित आहार आगे आने वाली संतति के भविष्य को निर्धारित करते हैं। ब्याने से एक सप्ताह पूर्व गर्भित बकरियों को हल्का, सुपाच्य दाना–चारा दिया जाना चाहिये। इन बकरियों को ब्याने के अनुमानित समय से 7–8 दिन पहले बाड़ों के आसपास ही चराया जाना चाहिये या फिर बाड़ों में ही रखा जाना चाहिये। ब्याने के 15 दिन पूर्व निम्न तैयारियां कर लेनी चाहिये।

ब्याने के लिये प्रयुक्त होने वाले प्रत्येक बाड़े को अच्छी तरह से साफ करके सुखा लेना चाहिये। एक हफ्ते उपरान्त चूना डालकर उसमें सूखी घास का बिछौना देना चाहिये। इन्हीं बाड़ों को प्रत्येक ब्याने वाली बकरी के लिये उपयोग में लाया जाना चाहिये।

जैसे–जैसे बकरी के प्रसव का समय नजदीक आता है उनमें निम्न परिवर्तन दृष्टिगोचर होते हैं।

- बकरी बेचैन होने लगती है।
- बकरी के अयन (अडर) का आकार बढ़ जाता है। थनों में चमक एवं फूलापन दिखाई देता है। पहली बार ब्याने वाली अधिकांश बकरियों के थनों में दूध भी उतर आता है।
- बकरी की योनि मार्ग से लसलसा, पीला एवं गाढ़ा स्राव ब्याने से कुछ दिन पूर्व निकलना आरम्भ हो जाता है।
- बकरी झुंड से अलग एकान्त पसंद करती है।
- ब्याने से कुछ घण्टे पूर्व बकरी बार–बार उठती–बैठती है और अनमनी रहती है।
- जैसे–जैसे ब्याने का समय नजदीक आता है प्रसव दर्द शुरू हो जाते हैं।

बकरियों में जनन

भारतीय बकरियों की नस्लों के प्रमुख जनन लक्षण निम्नलिखित हैं।

नस्ल	लैंगिक परिपक्वता		प्रजनन ऋतु	मदकाल अवधि (घण्टे)	मदचक्र (दिन)	प्रसवोपरान्त मदकाल (दिन)	गर्भकाल (दिन)
	आयु (दिन)	वजन (किग्रा)					
जमुनापारी	553	25	मई–जुलाई अक्टूबर–नवम्बर	38	19	149	147.7
बीटल	523	24	वर्षभर किन्तु अत्यधिक गर्मी व ठण्ड में मंदी	24	–	170	146.6
सिरोही	449	27	फरवरी–मई अक्टूबर–दिसम्बर	–	–	–	146.4
जखराना	422	22	फरवरी–मई अक्टूबर–दिसम्बर	29	21	131	148.1
मारवाड़ी	311	17	–	35	19	171	–

Scanned with OKEN Scanner

कच्छी	561	24	–	–	–	168	–
बरबरी	288	16	वर्षभर किन्तु अत्यधिक गर्मी व ठण्ड में मंदी	38	19	56	145
सूरती	–	–	–	55	20	–	–
मालाबारी	437	18	वर्षभर किन्तु अत्यधिक गर्मी व ठण्ड में मंदी	52	21	91	147.1
ब्लैक बंगाल	300	13	वर्ष भर, आवृत्ति बदलती रहती है।	40	19	77	143
चेगू (पश्मीना)	365	–	–	24	20	48	–

नवजात बच्चों की देखभाल

ब्याने के तुरंत बाद बच्चों के मुँह तथा नाक के अन्दर–बाहर लगी म्यूकस की झिल्ली को हटाकर उन्हें सूखे, मुलायम कपड़े से पोंछ देना चाहिए। बच्चे को सूखी घास या जूट के बोरे पर रखकर बकरी को अपने बच्चे को चाटने दें। बच्चे की नाभि को साफ धारदार चाकू या ब्लेड से (टिंचर आयोडीन के घोल में डालकर) उसके आधार से 3–4 से.मी. ऊपर से काटकर धागे से बाँध दें। घाव को रोजाना 3–4 दिन तक इसी घोल से साफ करते रहें। नवजात बच्चों को अपनी माँ का शुरू का दूध (खीस) जन्म के आधा से एक घण्टा के अन्दर अवश्य पिलायें। यह उनमें रोग से बचाव के लिये प्रतिरोधक शक्ति प्रदान करता है। जन्म के बाद बच्चों को एक सप्ताह तक अपनी माँ के साथ लकड़ी के केज में रखना चाहिए। इससे बकरी तथा बच्चे आपस में एक–दूसरे की पहचान कर लेते हैं। इस अवधि में उन्हें 24 घण्टे में तीन बार माँ का दूध पिलायें। तदोपरान्त 3 माह की उम्र तक उन्हें सुबह–शाम दूध पिलाना पर्याप्त होता है। तीसरे माह के अन्त में जब बच्चे दाना, हरा चारा एवं मुलायम पत्तियां खाने लगें तो धीरे–धीरे दूध पिलाना बन्द कर देना चाहिए।

बकरी के बच्चों का पोषण प्रबन्ध

बकरी के बच्चों की वृद्धि विभिन्न कारकों पर निर्भर करती है। इसमें से एक प्रमुख कारक पोषण प्रबन्ध है। बच्चों को यदि वृद्धि के समय उचित पोषण दिया जाये तो उसका परिणाम आगे उनके वयस्क होने पर नर में प्रजनन के लिए तथा मादा में दूध, माँस इत्यादि के लिए उत्तम होता है। सामान्यतः सभी विटामिन्स विभिन्न हरे चारों में पाये जाते हैं। खनिज लवण भी आहार और चारे में पाये जाते हैं। इन्हें दानें के मिश्रण में भी मिलाया जाता है। बच्चों के लिए माँ का दूध जन्म से लेकर 3 महीने की आयु तक अति आवश्यक है (तालिका 1)। इस अवधि में बच्चों को क्रीप आहार रसीले हरे चारे के साथ इच्छानुसार दिया जाता है। इस आयु पर बच्चे घास और चारे को खाना शुरू कर देते हैं। बच्चों का क्रीप आहार ऊर्जा और प्रोटीन से परिपूर्ण होना चाहिए एवं रेशा बहुत कम मात्रा में होना चाहिए क्योंकि इस आयु (0–3 माह) में बच्चों का रूमन रेशा के पाचन के लिए विकसित नहीं होता है।

Scanned with OKEN Scanner

तालिका 1: बकरी के बच्चों की 0–3 माह तक आयु के लिए पोषण प्रबन्ध

उम्र (दिनों में)	शारीरिक भार (कि.ग्रा.)	पोषण की संख्या	दूध	हरा चारा	क्रीप आहार
0–7	1–3	माँ के साथ	इच्छानुसार	–	–
8–30	3–5	2–3	200–350 मि.ली.	इच्छानुसार	इच्छानुसार
31–60	5–7	2	300–400 मि.ली.	इच्छानुसार	100–150
61–90	6–10	2	200 मि.ली	इच्छानुसार	150–200

3–12 महीने की आयु पर बच्चों को इच्छानुसार चारे के साथ दाने के मिश्रण की नियत मात्रा दी जाती है (तालिका 2)। इस आयु पर बच्चे रोमन्थ (रूमन) के सूक्ष्म जीवाणुओं के द्वारा रेशे का पाचन करना प्रारम्भ कर देते हैं। इस आयु पर हरा एवं सूखा चारा इच्छानुसार देना चाहिये। दाने की मात्रा निम्न तालिका के अनुसार देना चाहिये।

तालिका 2: बढ़ती हुई बकरियों (3–12 माह) हेतु पोषण प्रबन्ध

उम्र (माह)	शारीरिक भार (कि.ग्रा.)	दाना मिश्रण (ग्राम)	
		छोटी नस्ल	बड़ी नस्ल
3	6–10	150	200
4	7–11	200	250
5	8.5–12.5	225	275
6	10–14	250	300
7	11.5–15.5	275	325
8	13–17	300	350
9	14.5–19	300	350
10	16–21	300	350
11	17.5–23	300	350
12	19–25	300	350

अधिक माँस उत्पादन के उद्देश्य से उपरोक्त तीनों ही राशन बच्चों के लिए उपयोगी हैं (तालिका 3)। इस स्थिति में दाने–चारे का अनुपात (शुष्क पदार्थ के आधार पर) 40:60 प्रतिशत होना चाहिए। जिससे बच्चों में अधिकतम वृद्धि प्राप्त हो सके। हरी घास, बरसीम, रिजका, मक्का, जौ, जई, लोबिया, पेड़ों की पत्तियों आदि को हरे चारे के रूप में तथा अरहर, चना, जई तथा जौ आदि के भूसे की शुष्क चारे के रूप में 2 माह की उम्र के उपरान्त दिया जा सकता है। बच्चों में उचित वृद्धि दर के लिए शुष्क व हरे चारे का अनुपात (शुष्क पदार्थ के आधार पर) 2:1 का रखा जाना चाहिए जिससे उनकी उचित वृद्धि हो।

Scanned with OKEN Scanner

तालिका 3: माँस उत्पादन के लिए राशन का प्रतिशत संगठन (4.0–9.5 माह की आयु के लिए)

अवयव	राशन–1	राशन–2	राशन–3
मक्का का दाना	18	10	15
धान की भूसी	10	5	–
तिल की खली	15	17	–
सरसों की खली	–	10	10
बाजरा का दाना	20	–	10
मूँगफली की खल	–	–	20
गेहूँ का चोकर	5	25	17
चने की चुनी	8	18	15
अरहर की चुनी	9	12	10
साधारण नमक	1	1	1
खनिज मिश्रण	2	2	2
क्रूड प्रोटीन	15.5	18	18
सम्पूर्ण पाचक तत्व	75.0	65	70

बकरियों की कुल शुष्क पदार्थ की आवश्यकता उनके शारीरिक भार के 3–4 प्रतिशत के बराबर होती है। दूध देने वाली बकरियाँ एवं छोटे बच्चे अपने शारीरिक भार के लगभग 5 प्रतिशत के बराबर शुष्क पदार्थ खा लेते हैं। शुष्क पदार्थ की आवश्यकता को आधार बनाकर बकरियों के लिये आवश्यक दाने एवं चारे की मात्रा की गणना कर सकते हैं।

बकरियों की विभिन्न दैहिक अवस्थाओं में उनकी पोषण आवश्यकतायें भिन्न–भिन्न होती हैं।

1. *शुष्क बकरियाँ*– इस प्रकार की बकरियों को प्रतिदिन लगभग 500 ग्राम दहलनी या 1.0 किलोग्राम अदलहनी हरा चारा, 500–600 ग्राम दलहनी भूसा तथा लगभग 100 ग्राम दाना मिश्रण की आवश्यकता होती है।
2. *दूध देने वाली बकरियाँ*– दूध देने वाली बकरियों को दलहनी हरा चारा कम से कम एक किलोग्राम प्रति बकरी प्रति दिन के हिसाब से अवश्य दें। यदि हरा दलहनी चारा उपलब्ध नहीं है तो उस दशा में बकरियों को दलहनी चारे से बनी हुई 'हे' खिलाकर उनकी पोषण आवश्यकताओं को पूरा किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त प्रति किलो दूध उत्पादन के लिये 200–250 ग्राम दाना प्रति बकरी प्रति दिन देना चाहिए।
3 *गर्भित बकरियाँ*– गर्भित बकरियें को ब्याने से लगभग 45 दिन शेष रहने के समय से प्रतिदिन 300–400 ग्राम अतिरिक्त दाने की आवश्यकता होती है। इससे बकरी से पैदा होने वाले बच्चे का जन्म के समय सामान्य वजन होगा, बकरी से दूध उत्पादन उपयुक्त मात्रा में होगा तथा दूध देते समय बकरी का स्वास्थ्य एवं वजन ठीक रहेगा। गर्भित बकरियों के पोषण के बारे में एक महत्वपूर्ण बात और ध्यान में

Scanned with OKEN Scanner

रखनी चाहिए कि बकरी के ब्याने के 40–45 दिन पूर्व से गर्भाशय का आकार बढ़ने के कारण रूमन पर दबाव पड़ता है जिससे बकरी के आहार ग्रहण करने की क्षमता सामान्य से कम हो जाती है। अतः इस समय दिये जाने वाले चारे एवं दाने की गुणवत्ता उच्च कोटि की होनी चाहिए जिससे कि सामान्य से कम आहार ग्रहण करने के बावजूद भी बकरी की पोषण आवश्यकतायें पूरी हो सकें।

4 *प्रजनक बकरों का पोषण–* प्रजनन के लिये प्रयोग में लाये जाने की स्थिति में सामान्य पोषण (हरा चारा, दलहनी भूसा एवं 200–250 ग्राम दाना मिश्रण) के अतिरिक्त 400–500 ग्राम दाना मिश्रण प्रति बकरा प्रतिदिन के हिसाब से दिया जाना चाहिए। वर्ष के शेष समय सामान्य पोषण ही पर्याप्त होता है।

बकरियों के लिये दाना मिश्रण– बकरियों के लिये न केवल दाने की मात्रा बल्कि इसकी गुणवत्ता इनके उत्पादन को प्रभावित करती हैं। यदि बकरियों को अच्छी गुणवत्ता वाला दहलनी हरा चारा या दलहनी चारे से बनी 'हे' उचित मात्रा में उपलब्ध है तो उस दशा में दाने के मिश्रण में केवल अनाज जैसे जौ, बाजरा, मक्का, ज्वार, गेहूँ, जई आदि ही पर्याप्त है। परन्तु उस समय जब अच्छी गुणवत्ता वाला दलहनी हरा चारा या इससे बनी हुई 'हे' उपलब्ध नहीं है तब बकरी के दाने के मिश्रण में उचित मात्रा में खल का मिलाना आवश्यक है जिससे कि पोषण में प्रोटीन एवं ऊर्जा का उचित सन्तुलन रहे। इसके अतिरिक्त दाने के मिश्रण में 1.5 प्रतिशत नमक एवं 1.5 प्रतिशत खनिज लवण मिलाना आवश्यक है।

बकरी आवास एवं उपकरण

बकरी आवासों को ऊँची जगह पर बनाना चाहिए। वहाँ से वर्षा के जल के निकासी की समुचित व्यवस्था होनी चाहिए। यदि छत के ऊपर छप्पर डाल दिया जाये या फेलने वाली बेलें चढ़ा दी जायें तो आवास के अन्दर गर्मी का प्रभाव कम हो जाता है। लोहे की चद्दरों वाले आवासों के ऊपर सफेद पेंट भी किया जा सकता है।

बकरियों को आवास में छत से ढकी एवं खुली दोनों जगहों की जरूरत पड़ती है। ढकी जगह से जानवर धूप, ओस एवं वर्षा से बचता है तथा खुली जगह (बाड़ा) में वह आराम तथा व्यायाम करता है। पूरे आवास का 1/3 ढकी जगह के रूप में तथा 2/3 हिस्सा बाड़े के रूप में रखा जाता है। बकरे एवं बकरियों को उनकी उम्र एवं कार्य के अनुसार जगह की आवश्यकता (तालिका 4) घटती–बढ़ती रहती है। बकरियों को आवश्यकतानुसार जगह न देने पर उनका स्वास्थ गिरता है, उनकी बढ़त कम हो जाती है तथा उत्पादन क्षमता में कमी आती है।

तालिका 4: विभिन्न उम्र की बकरियों के लिये जगह की आवश्यकता।

उम्र	ढकी जगह (वर्ग मीटर)	बाड़े में खुली जगह (वर्ग मीटर)
3 महीने तक के बच्चे	0.2–0.3	0.4–0.6
3–9 महीने तक के बच्चे	0.6–0.75	1.2–1.5
9–12 महीने तक के बच्चे	0.75–1.0	1.5–2.0
वयस्क बकरे	1.5–2.0	3.0–4.0
गाभिन एवं दूध देने वाली बकरियाँ	1.5	3.0

Scanned with OKEN Scanner

दीवारों में हवा आने के लिये जो जगह बनायी जाती है उसी से आवास में रोशनी एवं धूप भी आती है। बकरी आवासों का हवादार होना अति आवश्यक है। मौसम के अनुसार हवा के आने–जाने की जगहों को कम ज्यादा किया जा सकता है।

खुले आसमान के नीचे रखने के बजाय बकरियों को यदि एक ऐसी जगह पर रखा जाये जो कि केवल ऊपर से ढका हो तो उससे भी उनको राहत मिलती है। 30 प्रतिशत गर्मी ऊपर से आती है। ऊपर ढकने से यह गर्मी पशुओं तक नहीं पहुँच पाती। अधिकांशतः गाँवों में पशुओं के लिये छप्पर की छतें बनाई जाती हैं तथा बड़े प्रक्षेत्रों पर सीमेंट अथवा लोहे की जी.आई. नालीदार चद्दरों से पशुओं के बाड़े बनाये जाते हैं। वैज्ञानिक प्रयोग से पता चला है कि एसबेस्टस अथवा लोहे की चद्दरों की तुलना में छप्पर गर्मी अथवा ठण्ड रोकने में ज्यादा अनुकूल है, पर छप्पर जल्दी खराब हो जाते हैं तथा इनमें आग इत्यादि लगने का भय बना रहता है। छप्पर पर मिट्टी के गारे, भूसे एवं तारकोल को मिलाकर लेप करके इसे सुधारा जा सकता है, जिससे कि ये जल्दी खराब नहीं हों, भीगे नहीं तथा आग भी देर से पकड़े। प्रयोग से यह देखा गया है कि सुधरे छप्पर, अन्य छप्परों से ज्यादा अच्छे तथा गर्मी, ठण्ड तथा नमी को रोकने में सहायक होते हैं।

बकरियों का बाड़ा उनके छत वाले आवास से सटा हुआ होता है। बाड़ा चारों तरफ से घिरा होता है। 1.5 मीटर से 2 मीटर ऊँची 4'' की जाली (चेन लिंक) इस कार्य हेतु प्रयोग की जा सकती है। जाली लगाने हेतु प्रत्येक 2 से 3 मीटर की दूरी पर लकड़ी की बल्ली अथवा लोहे के खम्बे जमीन में गाड़े जाते हैं। जाली को सीधा रखने के लिये उसके ऊपरी एवं नीचे हिस्से में लोहे (जी.आई.) के मोटे तार डाले जा सकते हैं। बाँस एवं बल्लियों से भी बाड़े बनाये जा सकते हैं। बाड़े का क्षेत्रफल छत वाली जगह का दुगना रखा जाता है।

बकरी आवास की लम्बाई आवश्यकतानुसार रखी जा सकती है परन्तु हवादार बनाने हेतु चौड़ाई किसी भी हालत में 12 मीटर से ज्यादा नहीं रखनी चाहिये। चौड़ाई को जगह के अनुसार 6 मीटर से 8 मीटर के बीच में रखना उचित रहता है। इससे हवा के बहाव में कोई दिक्कत नहीं आती है। इसी तरह, आवास की ऊँचाई, किनारे पर 2.7 मीटर से कम नहीं रखना चाहिए। अधिकांशतः बकरी आवासों की लम्बाई 20 मीटर, चौड़ाई 6 मीटर तथा किनारे पर ऊँचाई 2.7 मीटर रखी जाती है।

उपकरण

बकरी के दाने तथा चारे में सबसे ज्यादा लागत लगती है। साथ ही सबसे ज्यादा नुकसान दाने, भूसे तथा चारे को रखने एवं उन्हें खिलाते समय होता है। अधिकांशतः बकरियों को भोजन ऐसे उपकरणों में दिया जाता है जिसमें बकरियाँ या तो पैर डाल देती हैं या उनमें उनका पेशाब एवं मेंगनी चली जाती है। खाने के समय काफी दाना–चारा बाहर भी गिर जाता है। अधिकतर प्रचलित उपकरण या तो दाने या भूसे के लिये हैं अथवा चारे के लिये। इस विसंगतियों को दूर करने के लिये केन्द्रीय बकरी अनुसंधान संस्थान ने कुछ ऐसे उपकरण बनाये हैं जिनमें दाना, भूसा एवं हरा चारा सभी कुछ एक साथ अथवा अलग–अलग खिलाया जा सकता है। इन उपकरणों में दाने चारे का नुकसान भी कम होता है तथा उसमें पेशाब अथवा मेंगनी नहीं रहती है। वयस्क

Scanned with OKEN Scanner

जानवरों एवं बच्चों के लिये अलग–अलग तरह के उपकरण बनाये गये हैं। बच्चों के पानी पीने के लिये भी सुधरे उपकरण विकसित किये गये हैं।

बकरियों की उम्र का आँकलन

अधिकांश बकरी पालक के पास बच्चों के पैदा होने की तिथि आदि का लिखित अभिलेख नहीं होता है। इस कारण बकरियाँ खरीदते समय उनकी उम्र का लगभग सही आंकलन प्रायः दन्त विन्यास द्वारा किया जाता है। बकरियों के निचले जबड़े में 8 आगे के दांत होते हैं। बकरी की आयु के अनुसार दन्त विन्यास में परिवर्तन होता जाता है। लगभग 4 वर्ष की आयु तक इनके सभी दांत आ जाते हैं तथा इसके बाद आगे के दांतों का हिलना व टूटना प्रारम्भ हो जाता है। बूढ़ी बकरियों में दांत निकल जाते हैं तथा उनकी चारण पशु के रूप में उपयोगिता भी लगभग समाप्त हो जाती है। वयस्क बकरी में कम से कम एक स्थायी दंत–युग्म होता है।

बकरियों की बीमारियाँ

भारतीय ग्रामीण अंचल में उचित पशुचिकित्सा सुविधाओं व कार्यक्रमों के अभाव में, बकरियाँ विशेषकर उनके बच्चों में असामान्य मृत्युदर है। बकरी समूहों में अधिकांश मृत्यु दर, संक्रामक, परजीवी अथवा पोषण सम्बन्धित रोगों के कारण होती है। संक्रामक रोग सामान्यतः जीवाणु, विषाणु माइकोप्लाज्मा, प्रोटोजोआ और फंफूदी जनित होते हैं। किन्तु इनमें से कई रोग संसर्गज नहीं होते। कुछ रोगों में कारक के प्रेषण हेतु मध्यवर्ती परपोषी की आवश्यकता होती है। कई बार रोग कारक स्वस्थ पशु शरीर में ही रहता है, किन्तु पोषण या अन्य प्रतिबल की दशा में यह रोग जनक बन जाता है। संक्रामक रोग के कारक विषाणु, जीवाणु, अन्तः व बाह्य परजीवी, प्रोटोजोआ, माइकोप्लाज्मा मुख्य रूप से होते हैं। यह निम्न प्रकार के रोग हैं:–

विषाणु जनित रोग

1. ***पी.पी.आर. (बकरी प्लेग):*** यह अत्यधिक संक्रामक व घातक विषाणु जनित रोग है, विशेषकर नवजात शिशुओं में इस रोग का प्रकोप व मृत्यु दर काफी ज्यादा है। इस रोग से करीब 80–90 प्रतिशत बकरियाँ ग्रसित हो जाती हैं व उनमें 40–70 प्रतिशत तक बकरियों की मृत्यु हो जाती है। इस बीमारी की मुख्य पहचान के रूप में तेज बुखार, दस्त, आँख व नाक से पानी आना, न्यूमोनिया व मुँह में छाले पड़ जाना है। इस रोग का उपचार सफल नहीं है फिर भी जीवाणुओं के खिलाफ दिया गया उपचार द्वितीयक

Scanned with OKEN Scanner

संक्रमण को रोकते हुए कुछ पशुओं की रक्षा कर सकता है। बाजार से खरीदकर लाई गई बकरियों को टीकाकरण के बाद ही अपने स्वस्थ रेबड़ में मिलाना चाहिए। 4 माह की आयु से ऊपर के सभी बच्चों/बकरियों में पी.पी.आर. रोग का टीकाकरण ही रोग की रोकथाम का एक मात्र व अन्तिम उपाय है।

2. ***खुरपका–मुँहपका (एफ.एम.डी.):*** यह विषाणु जनित रोग है तथा इसकी उपजाति (ओ.,ए., एशिया–1) द्वारा होता है। प्रौढ़ पशु में इस रोग के मुख्य लक्षण, मुँह जीभ, डेन्टल पैड व खुरों के बीच में छाले व फूटकर घाव हो जाना है जिसके कारण पशु लंगड़ाने लगता है तथा मुँह में छाले व घाव हो जाने के कारण चारा खाने में परेशानी होती है। नवजात शिशुओं में बिना किसी लक्षण के अचानक मृत्यु हो जाती है। मेंमनों में यह रोग हृदय को प्रभावित करता है जिससे मृत्युदर 80–100 प्रतिशत तक हो जाती है। इस रोग का कोई विशेष उपचार नहीं है फिर भी इनकी उचित देखभाल जिसके अन्तर्गत लक्षणों के आधार पर उपचार एन्टीबायोटिक, दर्द/बुखार रोकने की दवाऐं (एनाल्जेसिक) तथा मुँह के व खुरों के छाले इत्यादि की एन्टीसेप्टिक घोल से धुलाई, नरम व सुपाच्य भोजन की आपूर्ति व रोगी/प्रभावित पशुओं को एक जगह रखना इत्यादि किया जा सकता है। इस रोग के प्रभावी रोकथाम के लिये खुरपका–मुँहपका की पालीवैलेन्ट वैक्सीन द्वारा टीकाकरण ही उचित उपाय है। इसका टीका प्रतिवर्ष 6 महीने के अन्तराल पर मुख्यरूप से जनवरी–फरवरी व जुलाई–अगस्त में 1 मि.ली. खाल के नीचे/माँस में लगाते हैं। मेंमनों में टीका 3 माह से अधिक उम्र के बच्चों में लगाना चाहिए।

3. ***बकरी चेचक:*** बकरी चेचक रोग ज्यादातर पश्चिम बंगाल, बिहार, महाराष्ट्र, उड़ीसा, राजस्थान एवं उनके आस–पास के क्षेत्रों में पाया जाता है। वर्तमान में यह रोग देश के अन्य भागों में भी देखा गया है। ब्लैक बंगाल प्रजाति की बकरियाँ इस रोग के प्रति काफी संवेदनशील होती हैं। यह रोग बकरियों की सभी अवस्था में होता है लेकिन छोटे बच्चे ज्यादा प्रभावित होते हैं। शरीर की चमड़ी पर इस रोग के चकत्ते/दाने मुख्य रूप से कान, होठ, थूथन व ऐसे सभी स्थानों की चमड़ी पर बाल रहित वाले स्थान पर पाये जाते हैं। रोग बढ़ने पर न्यूमोनिया हो जाता है। इस रोग में मृत्यु दर काफी ज्यादा होती है। इस रोग के फैलने वाले क्षेत्रों में टीकाकरण कराते हुए, इस रोग की रोकथाम की जा सकती है। बीमारी की रोकथाम हेतु बकरियों को स्वस्थ बकरियों से अलग रखना चाहिए। बीमार बकरियों के रहने का स्थान साफ सुथरा हवादार होना चाहिए। विशेषकर खुरंटों को साफ कर जलाकर गड्ढे में डाल देना चाहिए। इस रोग से बचाव हेतु बकरी चेचक का टीका

लगाया जाता है जो 3–4 माह की उम्र के मेंमनों में प्रारम्भिक टीका 1 मि.ली., खाल में नीचे लगाते हैं। द्वितीय टीकाकरण 6 माह बाद लगाना चाहिये। यह टीका प्रतिवर्ष लगाया जाना चाहिए। बकरी पालकों को यह स्पष्ट करना है कि भेड़ों का चेचक का टीका, बकरियों में चेचक से बचाव हेतु नहीं लगाया जाता है।

4. ***कन्टेजियस इक्थाइमा (मुँहा रोग):*** *कन्टेजियस इक्थाइमा* (मुँहा रोग) एक विषाणु जनित रोग है जिसमें छोटे–छोटे कड़े दाने ओठ, चेहरे, कान, थन/अयन पर पाये जाते हैं। इस रोग का प्रभाव इतना तीव्र होता है कि मेंमनों के मसूड़े व जीभ पर भी लाल दाने निकल आते हैं जिससे मेंमने को खाने–पीने में काफी कठिनाई होती है कभी–कभी इन दानों में मवाद व कीड़े पड़ जाते हैं। एन्टीसेप्टिक दवाओं को इन पर लगाने/ ड्रेसिंग करने से इसके ठीक होने में सहायता मिलती है।

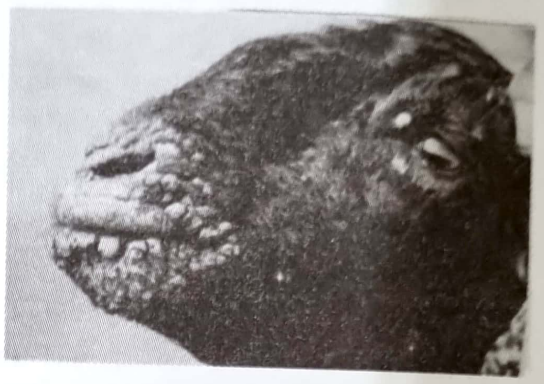

5. ***ब्ल्यू टंग (नीली जिह्वा):*** ब्ल्यू टंग (नीली जिह्वा) एक विषाणु जनित रोग है हमारे देश में यह बकरियों का प्रमुख उभरता रोग है। यह मुख्यतः भेड़ों की बीमारी है। यह रोग मच्छरों की प्रजाति क्यूलीकोइजिस द्वारा रोगी बकरी से स्वस्थ बकरियों में काफी फैलता है जिसमें बुखार व मुँह/नाक की श्लेष्मा झिल्ली में रक्त प्रवाह बढ़ जाता है अर्थात इनफ्लेमेशन या शोथ हो जाता है। होठ, मुँह के आन्तरिक हिस्सों जैसे जीभ, डेन्टल पेड पर सूजन आ जाती है। खुरों के ऊपरी हिस्से पर सूजन आ जाती है। सामान्यतः कुछ बकरियाँ स्वतः ठीक हो जाती हैं। लगभग 1–8 दिन के बाद 2–3 प्रतिशत तक बकरियों में मृत्यु भी हो जाती है। इस रोग से सम्बन्धित कोई भी वैक्सीन/टीका उपलब्ध नहीं है। यह रोग मच्छरों द्वारा फैलता है, अतः इनकी रोकथाम के लिए प्रभावी रसायनों का छिड़काव करना चाहिए। बाड़े में साफ–सफाई पर विशेष ध्यान देना चाहिए। रोगी पशुओं को अलग कर चिकित्सा करनी चाहिए। रोगग्रस्त क्षेत्र से बकरियों की खरीद नहीं करना चाहिए।

जीवाणु जनित रोग

1. ***इन्टेरोटोक्सीमिया (आंतों का जहर):*** इन्टेरोटोक्सीमिया (आंतों का जहर) रोग क्लास्ट्रीडियम परफ्रिजेन्स जीवाणु द्वारा भेड़/बकरियों की आंतों में उत्पन्न किये गये जहर (टाक्सिन) के आंतों द्वारा अवशोषण से होता है। यह जीवाणु सामान्यतया आंतों में पाया जाता है तथा पशु द्वारा आवश्यकता से अधिक दाना–चारा खा लेने या खान–पान में अचानक परिवर्तन कर देने से, सम्बन्धित जीवाणु की वृद्धि दर अचानक बढ़ जाती है जिसके फलस्वरूप जीवाणु द्वारा टाक्सिन/जहर का अत्यधिक उत्पादन हो जाने से

Scanned with OKEN Scanner

बीमारी का प्रकोप होता है। इस बीमारी के मुख्य लक्षणों में अचानक पेट में तीव्र दर्द, जमीन पर गिरकर घिसटना या चक्कर लगाना, चाल में असमानता, लड़खड़ाहट, बैठने की प्रक्रिया में लगातार बदलाव, अफरा व अन्त में काले रंग का दस्त होता है तथा विशेषकर अच्छे व स्वस्थ पशुओं की 4–24 घंटे में मृत्यु हो जाती है। इस रोग की रोकथाम के लिए इन्टेरोटोक्सीमिया का वार्षिक टीकाकरण ही मुख्य उपाय है तथा इस बात का विशेष ध्यान रखा जाय कि पशु को दिये जाने वाले दाने/चारे में अचानक कोई परिवर्तन न किया जाये। मेमनों में प्रथम टीकाकरण 3 महीने की उम्र पर दिया जाता है। इसके बाद दूसरा बूस्टर टीका 3 सप्ताह बाद लगाया जाता है। इसके बाद प्रतिवर्ष दो टीके 3 सप्ताह के अन्तराल पर देने चाहिये। इस बात का विशेष ध्यान रखा जाय कि पशु को दिये जाने वाले दाने/चारे में अचानक कोई परिवर्तन न किया जाये।

2. ***न्यूमोनिया (पाश्चुरोलोसिस):*** यह जीवाणु व माइकोप्लाजमा जनित संक्रामक रोग है। रोगग्रस्त बकरी द्वारा दूषित, संक्रमित पानी, दाना–चारा खाने से यह स्वस्थ पशुओं में फैलता है। यह रोग मेंमनों व बड़ी बकरियों दोनों में होता है। यह रोग वातावरण में तेजी व अचानक से परिवर्तन होने की स्थिति में पनपने लगता है। इस बीमारी में बकरी को तेज बुखार के साथ आंख व नाक से पानी बहता है, साँस लेने में कठनाई होती है। समय पर उपचार न होने पर 1–2 दिन में रोग ग्रस्त पशु की मृत्यु भी हो जाती है। रोग ग्रस्त पशु को तुरन्त स्वस्थ पशुओं से अलग करके, एन्टीबायोटिक्स की सुई आवश्यकतानुसार मात्रा में पशु चिकित्सक की सलाह से देने से रोग पर प्रभावी नियंत्रण किया जा सकता है। मेंमनों में पहला टीका 3–6 महीने की उम्र पर तथा दूसरा टीका प्रथम टीकाकरण के 6 माह बाद लगाना चाहिये। इसके बाद प्रतिवर्ष टीकाकरण करना चाहिये।

3. ***ब्रूसेल्लोसिस:*** ब्रूसेल्लोसिस एक तीव्र व लम्बे समय तक चलने वाली बकरियों की बीमारी है जो कि ब्रुसेल्ला मेलीटेन्सिस नामक जीवाणु द्वारा होती है। इस रोग में मादा बकरियों में गर्भ के 3–4 महीने में गर्भपात होता है तथा जेर का न गिरना, गर्भाशय में संक्रमण/मवाद पड़ जाना व बाँझपन या बच्चा न देना भी मुख्य लक्षण हैं। बकरों में अण्डकोष में संक्रमण (आर्काइटिस), पैरों के जोड़ों में गठिया व बच्चा पैदा करने की क्षमता का नष्ट हो जाना मुख्य लक्षण हैं। रक्त नमूनों की जाँच में यदि पशु में रोग पाया जाता है तो उसे स्वस्थ पशुओं के समूह से अलग कर नष्ट कर देना चाहिए।

4. ***जोहनीज (आंतों की टी.बी.):*** जोहनीज (आंतों की टी.बी.) रोग एक जीवाणु जनित माइकोबैक्टीरियम पैराटयूबरक्यूलोसिस द्वारा होने वाला तथा शरीर को धीरे–धीरे कमजोर करके नष्ट करने वाला रोग है जिससे वयस्क बकरियाँ दिन प्रतिदिन कमजोर होती जाती हैं, शरीर कंकाल जैसा, चमड़ी हड्डियों से चिपकी हुई, लड़खड़ाती हुई चाल, शरीर के बाल की चमक खत्म हो जाती है, दस्त हो भी सकते हैं या नहीं भी, परन्तु अन्त में मृत्यु हो जाती है। सामान्यतः इस रोग का जीवाणु आंतों में पाया जाता है लेकिन

Scanned with OKEN Scanner

शारीरिक कमजोरी, पूरा भोजन न मिलना, वातावरण के शरीर पर दुष्प्रभाव से, यह रोग पनपने लग जाता है। इस रोग का कोई सफल उपचार नहीं है। मल की जाँच द्वारा रोग की पुष्टि होने पर ग्रसित बकरी को निकाल दिया जाता है। इस रोग की रोकथाम हेतु बाड़ों में सफाई रखना अत्यन्त आवश्यक है।

अन्तः परजीवी रोग

बकरियों में यह रोग गोलकृमि प्रमुखतः हिमान्कस, ट्राइकोस्ट्रन्गाइलस इत्यादि परजीवियों द्वारा फैलता है। ये परजीवी गन्दे पानी व दूषित चारे के माध्यम से प्रवेश करते हुए आंत की श्लेष्मा झिल्ली से चिपकर उस पर निर्भर हो जाते हैं। जिससे बकरियाँ दिन प्रतिदिन कमजोर हो जाती हैं। चरागाह का प्रदूषण इस रोग को फैलाने में काफी सहायक होता है। रोग ग्रसित बकरी को बदबूदार दस्त, जिसमें म्यूकस व आंत की श्लेष्मा झिल्ली व रक्त आ सकता है। शरीर में खून की कमी तथा भूख कम लगती है। कभी–कभी निचले जबड़े के नीचे सूजन आ जाती है। उपचार के अन्तर्गत एलबेन्डाजाल (10 मि.ग्राम/कि.ग्रा.), फेनबेन्डाजाल (8–10 मि.ग्राम/कि.ग्रा.), मोरेन्टल टाइट्रेट (10 मि.ग्राम/कि.ग्रा.), आइवेक्टिन इंजेक्शन (1 मि.ली/ प्रति 50 कि.ग्रा.) वजन के हिसाब से या सुई निर्धारित खुराक में पशुचिकित्सक की सलाह से दे सकते हैं। चूंकि वर्षा ऋतु के तत्काल बाद इसका प्रकोप तेजी से बढ़ता है इसलिए मानसून आने से पहले (प्रीमानसून) व मानसून खत्म होने के बाद डिवर्मिंग/दवा पिलाना आवश्यक है।

रोकथाम के अन्तर्गत बाड़े एवं चरागाहों की सफाई व कीटाणुनाशन करना आवश्यक है। वर्ष में कम से कम तीन बार परजीवी की औषधि अवश्य दें तथा प्रत्येक बार औषधि का रासायन अलग होना चाहिए।

1. *फीताकृमि संक्रमणः* इनको टेपवर्म भी कहते हैं। ये उभय लिंगी परजीवी मोनीजिया कृमि समूह में आते हैं। ये परजीवी विशेष रूप से छोटे बच्चे (मेंमनों) को ज्यादा प्रभावित करते हैं। इनके संक्रमण से आंतों से भोज्य पदार्थो का अवशोषण कम हो जाता है। इससे कब्जियत एवं दस्त हो जाते हैं। बकरियों की मेंगनी के साथ फीताकृमि के टुकड़े बाहर आने लगते हैं व संक्रमण फैलने लगता है। उपचार के अन्तर्गत फेनबेन्डोजाल व प्राजीक्विन्टल/ फेन्टास प्लस की गोली (1 गोली प्रति 30 किलो शरीर भार पर) खिलाने से इनसे छुटकारा मिल जाता है।

2. *यकृत कृमि संक्रमणः* जिन क्षेत्र में तालाबों की संख्या ज्यादा होती है वहाँ पर शंखकृमि (स्नेल) भी ज्यादा होते हैं। इन स्नेल के शरीर में लिवर फ्लूक की कुछ अवस्थायें बढ़ती हैं और तालाब के निकट के चराई वाली घास को दूषित करती हैं। इस दूषित घास को खाने से बकरी में यह रोग उत्पन्न होता है। ज्यादा संख्या में कृमि शरीर में पहुँचने पर पशु का यकृत इन कृमियों से भर जाता है। यकृत की कार्य शक्ति कम होती है। पशु में पतले बदबूदार तेज दस्त होते हैं तथा पशु दिन प्रतिदिन कमजोर होता जाता है तथा उत्पादन कम हो जाता है। इस रोग में बकरियों की अचानक मृत्यु भी हो जाती है। उपचार के अन्तर्गत आक्सीक्लोजेनाइड की गोली एक ग्राम प्रति 100 किलो शारीरिक भार की दर से या निलजान लिक्विड 1 मि.ली. प्रति 3 किलो शारीरिक भार की दर से पिलाना चाहिए। ट्राईक्लेबेन्डाजोल 10 मि.ग्रा./कि.ग्रा. वजन काफी प्रभावशाली दवा है तथा प्रत्येक 6–6 माह पर जाँच करते हुए उपचार करें। लीवर सुधार के लिये

Scanned with OKEN Scanner

लीवर टानिक दे सकते हैं। ठहरे हुऐ पानी/तालाबों/पोखर से बकरी को पानी नहीं पिलाना चाहिये।

3. *काक्सीडिया (कुकड़िया):* यह रोग एक प्रोटोजोआ परजीवी आइमेरिया के द्वारा होता है जिसमें 2 से 6 माह तक के बढ़ते हुए बच्चे मुख्य रूप से प्रभावित होते हैं। इस रोग से प्रभावित बच्चों में बदबूदार दस्त, भयंकर कब्ज, पेट में दर्द, शरीर में खून की कमी, व निरंतर वजन में कमी मुख्य लक्षण होते हैं। अत्यधिक प्रभावित बच्चों में मृत्यु भी हो जाती है। उपचार के बाद जो बच्चे रोग मुक्त हो जाते हैं उनकी वृद्धि रूक जाती है तथा शरीर पर बाल की पर्त खुरदरी (रफ) हो जाती है। काक्सीडियोसिस दैनिक प्रबन्धन में किसी कमी के कारण होने वाला रोग है।

इनकी रोकथाम एक स्थान पर बच्चों की अत्यधिक भीड़–भाड को रोककर, बच्चों को माँ/वयस्क बकरियों से अलग रखकर बाड़ों की नियमित व अच्छी तरह सफाई, नियमित अन्तराल पर बाड़ों में चूने का छिड़काव करके की जा सकती है। रोकथाम में ही आवश्यकतानुसार दवा खिलाकर इस परजीवी के अंडों (ऊसिस्ट) की संख्या (लोड) को भी कम किया जा सकता है। इस रोग की चिकित्सा के सल्फडाइमिडिन 100–200 मि.ग्रा./कि.ग्रा. शारीरिक भार, एम्प्रोलियम 10–20 मि.ग्रा/ प्रति कि.ग्राम रोजाना 5–6 दिन तक खिलाना चाहिए। इसके अतिरिक्त टोलट्राजुशिल 10 मि.ग्रा./कि.ग्रा. वजन भार से 1 या 2 दिन देना चाहिये।

बाह्य परजीवी रोग

1. *खुजली (मेंज):* यह रोग माइट नामक बाह्य परजीवी से होता है। यह त्वचा की आन्तरिक भाग में प्रवेश कर जाता है तथा संक्रमित शारीरिक भाग पर बकरियों को खुजलाहट महसूस होती है। संक्रमण बढ़ने पर खुजली पूरे शरीर पर बढ़ने लगती है। खुजलाहट व बैचेनी की वजह से संक्रमित भाग के बाल झड़ जाते हैं। त्वचा सूखी हो जाती है तथा कभी–कभी संक्रमित भाग से खून भी निकल आता है। बकरी की भूख कम हो जाती है फलस्वरूप उत्पादन कम हो जाता है। यह रोग रोगी बकरी से, स्वस्थ बकरियों में सम्पर्क द्वारा जल्दी से फैलता है। बकरी पालक की लापरवाही की स्थिति में पूरा रेबड़ खुजली (मेन्ज) से ग्रसित हो जाता है। अतः प्रारम्भिक अवस्था में ही इस रोग की उपयुक्त चिकित्सा करानी चाहिये।

इसकी चिकित्सा के लिए डेल्टामेथेरिन, साइपरमेथेरिन दवा (2–4 मिली. दवा को 1 लीटर पानी में मिलाकर) नहलाना चाहिये। आइवरमेक्टटिन या डोरामेक्टीन के इन्जेक्शन (1 मिली./50 कि.ग्रा. शरीर भार) से लाभ होता है। रोग के बचाव के लिए खुजली ग्रसित बकरियों को अलग रखकर चिकित्सा करानी चाहिये तथा बाड़े में सफाई का विशेष ध्यान रखना चाहिये। देशी दवाओं में "ऑल–इन–ऑल" मलहम नामक दवा बहुत ही कारगर है।

2. *जूँ, चिचड़ी (टिक्स) व फ्लीज:* बकरियों में टिक्स का प्रकोप काफी होता है। अतः खुजली में जो दवा प्रयोग लाते हैं वही दवायें चिचड़ी के प्रकोप को भी रोकती हैं। यह शरीर के बाह्य भागों को सक्रंमित करती है। विशेष रूप से पूँछ के नीचे, थनों, कानों के भीतरी भागों में किलनी (चिचड़ी) ज्यादा प्रभावित करती है। जुऐ एवं किलनी त्वचा से लगातार खून चूसते रहते हैं। फलस्वरूप पशु बैचेन रहता है। शरीर को खुजलाता रहता

Scanned with OKEN Scanner

है जिससे शरीर के प्रभावित भाग से बाल हट जाते हैं। लगातार खून चूसने से बकरियों में खून की कमी (एनीमिया) के लक्षण जैसे कमजोरी, उत्पादन में गिरावट, भूख कम लगना इत्यादि दिखाई देने लगते हैं। लगातार एवं ज्यादा संक्रमण होने की स्थिति में, बकरी कमजोर होकर मर भी सकती है। किलनियाँ कई प्रकार के रोगों के संवाहक का भी काम करती हैं। किलनियाँ का प्रकोप, बरसात के मौसम में ज्यादा होता है। इसके अण्डे व लार्वा जमीन पर व दराजों में रहते है। जो पशुओं के लिए लगातार संक्रमण का कारण बनते हैं। जुँऐं विशेषरूप से छोटे बच्चों (मेंमनों) को सर्दी के मौसम व उसके बाद के महीनों (फरवरी, मार्च) में ज्यादा संक्रमित करते हैं। जिससे बच्चों की शारीरिक वृद्धि कम होती है एवं खून की कमी (रक्ताल्पता) के कारण कमजोर होकर मृत्यु भी हो जाती है। फ्लीज छोटी मक्खियों के बराबर होती है। यह शरीर पर काटकर उड़ जाती हैं जिससे मेंमने एवं बकरियाँ बैचेन रहती हैं। जिससे भूख व उत्पादन प्रभावित होता है।

इन सभी में खुजली के लिए प्रयोग में आने वाली दवाओं से चिकित्सा व स्नान कराया जाता है। यह ध्यान देने योग्य बात है कि सभी बकरियों एवं मेंमनों को एक साथ दवा स्नान कराना चाहिये।

बीमारियों से बचाव हेतु कुछ सुझाव

प्रायः यह देखा गया है कि बकरी समूह में रोग नियंत्रण हेतु प्रारम्भिक उपाय व नियमित देख–रेख स्वास्थ्य–प्रबन्धन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इनके सामयिक व संगत प्रयोग द्वारा बीमारियों की आपतन दर व तीव्रता को रोका अथवा कम किया जा सकता है।

- बकरी पालन का प्रारम्भ हमेशा स्वस्थ पशुओं से करना चाहिए। खरीद के समय प्रत्येक पशु का बीमारियों के विशेष लक्षण, अपसामान्यतः या त्रुटि सम्बन्धित कठिनतम परीक्षण किया जाना आवश्यक है। सामान्यतः इन्हें किसी परिचित व विश्वसनीय पैतृक स्रोत से खरीदना चाहिए।
- खरीद के तुरन्त बाद लगभग एक माह तक रेबड़ की अन्य बकरियों से इन्हें पृथक अपने प्रेक्षण में रखना रोग नियंत्रण व बचाव में अहम् भूमिका निभाता है। परजीवी व रोगों के नियंत्रण हेतु विलगन काल में इनका कृमिहरण, जूँ हरण व टीकाकरण करना चाहिए। हमारे देश में अधिकांश बकरियाँ विस्तीर्ण प्रणाली में पाली जाती हैं, अतः यह कार्यक्रम चलाना आवश्यक है।
- बकरियों को यथासम्भव सन्तुलित व पर्याप्त आहार देना चाहिए क्योंकि सुपोषित बकरियों में संक्रमण व परजीवियों के लिये प्रतिरोध क्षमता होती है। संपूरक विटामिन व खनिज बकरियों को रातब के माध्यम से देते रहना चाहिए। यह ध्यान देने योग्य बात है कि अपने क्षेत्र में खनिज लवणों की कमी के अनुसार, क्षेत्र विशेष के लिए उपलब्ध खनिज मिश्रण ही बकरियों को देना चाहिये। उ.प्र., दिल्ली व उत्तराखण्ड के लिए विकसित व उपलब्ध खनिज मिश्रण जैसे लाइकामिन, कैलमिन (फोर्ट), शक्तिमिन, मिनटक इत्यादि रोजाना 5–10 ग्राम देना चाहिये।
- उपयुक्त बाड़े में आरामदायक वातावरण देकर बकरियों को पारिस्थितिक प्रतिबल से मुक्त रखा जा सकता है।

Scanned with OKEN Scanner

- गहन पद्धति में पाली जाने वाली बकरियों के बाड़े तथा आहार व पानी के बर्तनों को नियमित सफाई आवश्यक है, ताकि बाड़े व बर्तनों में रोगजनक परजीवी व कीट न पनप सकें।
- अनुत्पादक बकरियों को रेबड़ से छाँटकर अलग करके उनके स्थान पर परीक्षित अच्छे प्रजनक पशुओं को रखना प्रबन्ध दृष्टि से लाभप्रद है।
- आन्तरिक परजीवियों के लिये निरन्तर मल परीक्षण आवश्यक है ताकि संक्रमण की आपतन दर व तीव्रता का समय से पता चल सके। इससे उचित प्रभावी चिकित्सा में सहायता मिलती है। जिन क्षेत्रों में अत्यधिक आन्तरिक परजीवी आपतन दर होती है, वहाँ प्रतिकृमियों का कृमिहरण हेतु प्रयोग कम से कम बरसात से पहले व बरसात के बाद करना चाहिये।
- बाह्य रूप से बकरियों में किसी रोग लक्षण का अनुभव करते ही बीमार पशु को रेबड़ से विलगन कर पशु चिकित्सक की सहायता प्राप्त करने का प्रयत्न करना चाहिए। इसके साथ ही बाड़े व पशु उपयोग के बर्तनों की सफाई व विसंक्रमण सम्बन्धित गतिविधियों को और गहन कर देना चाहिए।
- बकरियों को अन्य पशुओं जैसे गाय, भेड़ आदि से पृथक कर देना चाहिए। इससे पशुओं में विभिन्न रोगों व परजीवियों का अन्तः संचरण नहीं हेाता।

स्वास्थ्य कार्यक्रम व प्रबन्ध

बकरियों की विभिन्न शरीर क्रियात्मक एवं उत्पादन स्थितियों के सुचारू रूप से संचालन के लिये विशिष्ट स्वास्थ्य कार्यक्रमों की आवश्यकता होती है। इनके सतत् कार्यान्वयन से रेबड़ में पशु स्वस्थ रहकर उत्पादनशील बने रहते हैं।

प्रजनन पूर्व कार्यक्रम

- प्रजनन योग्य समूह से भौतिक गुणों, स्वभाव तथा विगत जनन निष्पादन दक्षता के आधार पर अच्छे पशुओं का चुनाव करना चाहिए। बकरियों के रक्त की जाँच ब्रूसेलोसिस, लेप्टोस्पाइरोसिस आदि रोगों के लिये करनी चाहिए। संगठित प्रक्षेत्रों में इन बीमारियों की उपस्थिति की सम्भावना अधिक होती है। बकरियों में बारम्बार जनन विफलतायें इन रोगों की उपस्थिति इंगित करती है।
- बकरियों में कृमिहरण दवाओं का प्रयोग समय व मौसम के अनुसार करना चाहिये। किसी स्थान विशेष पर रेबड़ में लिवर फ्लूक की उपस्थिति होने पर पशुओं को साथ में रेनाइड, डिस्टोडिन, जेनिल जैसी दवायें भी पशुचिकित्सक की सहायता से उचित मात्रा में देनी आवश्यक हो जाती हैं।
- बकरियों में जनन क्षमता में सुधार हेतु विटामिन ए, डी व ई का इंजेंक्शन विशेषकर गर्मी में लाभप्रद होता है।
- संक्रमण रोगों के बचाव हेतु टीके, प्रजनन या गर्भावस्था से पूर्व लगाना आवश्यक है।
- जनन क्षमता सुधार व अल्पता निवारण हेतु विटामिन/खनिज मिश्रण को रातब के साथ मिलाना चाहिए। यह आवश्यक है कि क्षेत्रवार विकसित खनिज लवण मिश्रण

Scanned with OKEN Scanner

भी बकरियों को खिलाना चाहिये। जैसे कैलमिन (फोर्ट), मिनटेक डी, लाइकामिन, शाक्तिमिन इत्यादि।

गर्भावस्था

- गर्भावस्था के अन्तिम डेढ़ माह पशुओं को उच्च पोषण आहार पर रखना चाहिये तथा उन्हें खनिज व विटामिन मिश्रण पर्याप्त मात्रा में आवश्यकतानुसार देते रहना लाभप्रद हैं। गर्भावस्था में ऊर्जा, प्रोटीन, विटामिन व खनिज की आवश्यकता बढ़ जाने के कारण इन पोषक तत्वों की अल्पता होने की सम्भावना बनी रहती है जिसका सीधा सम्बन्ध बकरियों में अधिक मृत्युदर व बच्चों की उत्तरजीविता से है।
- जीवाणु व विषाणु जनित रोगों के विरूद्ध प्रत्येक बकरी को टीका लगवाना सुनिश्चित करना चाहिए। विशेष रूप से बच्चों में टिटनेस के बचाव के लिए, गर्भित बकरी को टिटनेस के टीके दिये जाने चाहिये। गर्भवती बकरियों में यदि टीका नहीं लगाया गया हो तो गर्भावस्था के अन्तिम माह में टीकाकरण किया जा सकता है ताकि माँ के साथ–साथ बच्चे में भी खीस द्वारा निश्चेष्ट रोगक्षमता आ सकें।
- गर्भावस्था के अन्तिम एक या दो सप्ताह में सभी आंत्रपरजीवियों के विरूद्ध विस्तृत प्रतिकृमिकों के प्रयोग द्वारा बकरियों में कृमिहरण करना चाहिए।

दुग्धावस्थाः दूध की मात्रा बनाये रखने के लिए निर्धारित मात्रा में दाने/रातव, खनिज लवण (5–15 ग्राम) देना चाहिये।

प्रसव तथा प्रसवोपरान्त स्वास्थ्य प्रबन्ध

- प्रसव के सम्भावित समय से लगभग एक सप्ताह पूर्व गाभिन बकरियों को रेवड़ से पृथक कर उन्हें आरामदायक सूखे व स्वच्छ बाड़े में रखना चाहिए। जहां तक सम्भव हो सके उन्हें उत्तेजना, परिवहन, अस्वच्छ, परिस्थितिकी, विपरीत जलवायु आदि जैसे अवांछित प्रतिबल से बचाना आवश्यक है।
- प्रसव के लिये निश्चित स्थान बनाना लाभप्रद रहता है। आदर्श मातृ बाड़ा छोटा, स्वच्छ, सूखा तथा जहाँ तक सम्भव हो गन्दगी व मल रहित हेाना चाहिए। बाड़े में गेहूँ या घास के भूसे को साफ बिछावन तथा उस पर 2–3 कि.ग्रा. चूना प्रति 100 वर्ग मीटर क्षेत्र की दर से छिड़काव द्वारा सकल संदूषण से बचाव हो जाता है। प्रसव पूर्व जननांग क्षेत्र व थनों की पूर्णतया धुलाई से संदूषण तथा नवजात बच्चों में दुग्धपान के दौरान संक्रमण नहीं होता। दूध पिलाने के बाद थनों को किसी थैली से ढक देना स्वास्थप्रद रहता है।
- गर्भाशय के संक्रमण से बचाव के लिये योनि के अन्दर तक प्रतिजैविकी (एण्टीवैक्टीरियल) बोलस निविष्ट कर देना चाहिए। प्रतिधारित प्लैसेन्टा को हल्के कर्षण द्वारा निकाला जा सकता है, किन्तु असफल होने पर पशु चिकित्सक की सहायता आवश्यक हो जाती है।

नवजात बच्चों एवं दूध छुड़ाने तक प्रबन्ध

- बच्चे के जन्म के साथ ही उसकी नाभि को साफ कैंची या तेज ब्लेड से 2 या 3 इंच नीचे काटकर उस स्थान पर टिंचर आयोडिन कम से कम दो दिन तक प्रयुक्त करना चाहिए।

Scanned with OKEN Scanner

- जन्म के तुरन्त बाद बच्चे के मुँह व नाक की झिल्ली साफ कर, उसे साफ कपड़े से बाँधकर सूखे भूसे के बिछावन पर रखना चाहिए।
- यदि जन्म के समय बच्चा सांस न ले पा रहा हो तो उसके पिछले पैर उठाकर मुँह के नीचे करके धीरे–धीरे झटके देने से बच्चा सामान्य साँस लेने लगता है।
- बच्चे को जन्म के दस मिनट के भीतर खीस पिलाना चाहिए ताकि उसे माँ से निश्चेष्ट रोध क्षमता प्राप्त हो सके।
- बकरी के बच्चे बहुत जल्दी संक्रामक रोगों के शिकार हो जाते हैं। अतः उनके बाड़ों की नियमित सफाई किसी कीटाणुनाशक जैसे 10 प्रतिशत फिनाईल से करना आवश्यक है। साथ ही प्रचलित संक्रामक रोगों के विरूद्ध टीके 3 माह की उम्र पर लगवा देना भी आवश्यक है।
- बच्चों को काक्सीडियोसिस से बचाने के लिऐ एम्प्रीसोल 5–6 दिन तक देना चाहिए। ई–कोलाई के संक्रमण द्वारा बच्चों को बहुधा दस्त होते हैं तथा उनकी मृत्यु हो जाती है। इस रोग के नियंत्रण बाड़ों में सफाई का विशेष ध्यान देना चाहिये।
- बाह्य परजीवियों से बच्चों की रक्षा करने के लिए उन्हें बाह्य परजीवी नाशक घोल में इस प्रकार नहलाना चाहिए कि घोल उनकी नाक, आंख, कान या मुँह के अन्दर ना जाये।
- रोगों से बचाव के लिये बच्चों के बाड़े मिट्टी तथा बिछावन नियमित बदलना आवश्यक है। फर्श पर चूना छिड़कने से रोगों का संक्रमण कम हो जाता है।
- मेंमनों में *ई. कोलाई* जनित दस्त शुरूआत में होने की सम्भावना ज्यादा रहती है। अतः इस काल में बाड़ों की सफाई पर ज्यादा ध्यान देना चाहिये। नवजातों को 0.1 प्रतिशत पोटेशियम परमेगनेट के घोल से बकरी के थनों को साफ करने के बाद दूध पिलाना चाहिये।
- इस अवस्था में दस्त व अन्य रोग के बचाव में एन्टीबायोटिक 3–5 दिन तक देना चाहिये। दो माह की अवस्था या आगे उम्र पर मेंमनों में प्रोटोजोआ जनित कोक्सीडिओसिस (कुकडिया) रोग की सम्भावना बनी रहती है। अतः इस उम्र अवस्था में कोक्सीकारक दवा एम्प्रालियम खुराक 5–6 दिन तक लगातार देना चाहिये तथा साथ में बी–कम्पलेक्स दवा 5 मिली रोजाना पिलाना चाहिये।
- मेंमनों की 3–5 माह की उम्र पर आन्तरिक परजीवियों का संक्रमण बढ़ने लगता है। अतः इस उम्र अवस्था पर परजीवी नाशक दवा निर्धारित मात्रा में जरूर पिलानी चाहिये। बरसात से पहले व बाद में दवा की खुराक पिलाना लाभकारी रहता है।
- 3–4 माह की उम्र पर ई.टी. (आंत्र विषाक्तता), पी.पी.आर. (बकरी प्लेग), खुरपका मुँहपका (एफ.एम.डी), गोट पाक्स (बकरी चेचक), न्यूमोनिया (एच.एस.) का टीका दिया जाना चाहिये।

Scanned with OKEN Scanner

बकरी स्वास्थ्य कलैण्डर

बीमारी	प्रारम्भिक टीकाकरण		पुनः टीकाकरण
	प्रथम टीका	बूस्टर टीका	
खुरपका व मुँहपका रोग	2–3 महीने की उम्र	प्रथम टीकाकरण के 2–4 माह बाद	हर 6 माह पर
बकरी प्लेग (पी.पी.आर.)	4 महीने की उम्र	आवश्यक नहीं	4 वर्ष
बकरी चेचक	3–5 महीने की उम्र	प्रथम टीकाकरण के 3 सप्ताह बाद	12 माह
आंत्र विषाक्तता (इन्टेरोटोक्समिया)	3 महीने की उम्र	प्रथम टीकाकरण के 3 सप्ताह बाद दूसरा टीका	प्रतिवर्ष दो टीके 3 सप्ताह के अन्तराल पर
गलघोंटू	3–6 महीने की उम्र	प्रथम टीकाकरण के 6 माह बाद	प्रति वर्ष एक टीका

कृमिनाशक कार्यक्रम

कृमि रोग	उम्र	सेवन कराने की अवधि	विशेष
काक्सीडियोसिस	2–3 माह पर 3–5 दिन तक काक्सीमारक दवा देते है।	6 माह की उम्र तक	काक्सीमारक दवा 5 दिन तक निर्धारित मात्रा में देनी चाहिये।
अन्तः परजीवी	3 माह की उम्र	बरसात के प्रारम्भ में तथा अन्त में	सभी पशुओं को एक साथ दवा देनी चाहिये।
बाह्य परजीवी	सभी उम्र में	वर्ष में कम से तीन बार या संक्रमण बढ़ने पर	सभी पशुओं को एक साथ से नहलाना चाहिये।

बकरियों की प्राथमिक चिकित्सा

प्राथमिक चिकित्सा मनुष्य को ही नहीं अपितु पशुओं के लिये भी जरूरी हैं क्योंकि आपातकालीन समस्याएं एवं दुर्घटना पशुओं के साथ भी होती है। इस प्रकार हम देखते है कि प्राथमिक चिकित्सा वह पद्धति है जो किसी रोग की विस्तृत चिकित्सा के पूर्व की जाये। इससे पशु कभी–कभी स्वस्थ भी हो जाता है व बीमारी विकराल रूप धारण नहीं कर पाती। पशुचिकित्सक को बुलाने का समय मिल जाता है और उन्हें भी पशु के उपचार में आसानी हो जाती है। प्राथमिक चिकित्सा का पशु चिकित्सा में बहुत महत्व होता है। अतः पशुपालकों तथा किसानों को प्राथमिक चिकित्सा पर विशेष ध्यान देना चाहिये।

प्रायः दुर्घटनाओं में बकरी द्वारा विष खा लेना, अतिसार, अत्यधिक रक्तस्राव, हड्डी का टूटना व जोड़ों का हट जाना आम बात है। ये अवस्थाएं कष्टदायक तो है ही, कई बार प्राणलेवा भी हो जाती हैं। अतः यह आवश्यक है कि पशु रोग या पशु दशा की पहचान सर्वप्रथम की जाये। सर्वप्रथम जैसे ही यह पता चले कि कोई पशु बीमार है तो उसे स्वस्थ पशुओं से अलग कर दूर बाँध देना चाहिये। ऐसे बीमार पशु को हवादार,

Scanned with OKEN Scanner

शान्त एवं साफ जगह पर रखना चाहिये और शीघ्र घरेलू उपचार देना चाहिये। बीमार पशु को प्राथमिक चिकित्सा शीघ्र पहुंचाना चाहिये।

पशुओं को होने वाली कुछ प्रमुख बीमारियाँ व आकस्मिक आपातकालीन अवस्थाएं तथा उनके प्राथमिक उपचार निम्नलिखित हैं:–

दुर्घटनाएँ

1. *रक्तस्राव:* रक्त को रोकने का प्रमुख सिद्धान्त है कटी हुई नली पर दवाब देना ताकि रक्त का बहना रूक जाये। कटे हुये स्थान को 2–3 से.मी. ऊपर व नीचे से बाँध देना चाहिये। कई बार कटे हुये स्थान पर बॉध पाना सम्भव नहीं होता। ऐसी स्थिति में तहकर मोटा किये हुये कपड़े को फिटकरी के घोल में भिगोकर कटे हुये स्थान पर जोर से दबाकर रखना चाहिये। रक्तस्राव वाले स्थान पर बर्फ या ठंडे पानी को भी लगातार डालकर खून का बहना रोका जा सकता है। यदि खून की नली कट गई हो तो चिकित्सक को दिखाना आवश्यक होता है। इसके बाद तुरन्त पशुचिकित्सक से सम्पर्क करना चाहिये।

2. *हड्डी का टूटना या फैक्चर होना:* कई बार बकरियों में हड्डी टूट जाती है। यह दो प्रकार का होता है। पहली स्थिति में हड्डी टूटने के बाद चमड़े के अन्दर ही रहती है। जबकि दूसरी स्थिति में बाहर आ जाती है। हड्ड़ी का टूटकर चमड़े से बाहर निकल जाना खतरनाक स्थिति है। टूटी हड्डी को हिलने डुलने से बचाने के लिये आवश्यक है कि उन्हें बांस की खपच्चियों से बाँध दिया जाये। बांस की जगह पर दूसरे प्रकार का सामान भी व्यवहार में लाया जा सकता है जैसे पेड़ की डाली। हड्डी टूटने के पश्चात् बहुत दर्द होता है। टूटी हड्डी यदि बाहर निकल आई हो तो उसे साफ कपड़े से ढक देना चाहिये। इस स्थिति में यह भी आवश्यक है कि पशु हिल डुल न पाये जोकि अति पीड़ादायक स्थिति होती हैं।

3. *घाव होना या चोट लगना:* प्रायः चोट लगने या दुर्घटना ग्रस्त होने पर शरीर पर घाव हो जाते हैं। घाव दो प्रकार के हो सकते हैं। एक जिनमें चमड़ी फटी न हो व दूसरी जिसमें चमड़ी फट गई हो। जब चमड़ी फटी हुई नहीं रहती तो प्रायः चोट लगने पर उस जगह सूजन आ जाती है या फिर उसके नीचे खून का जमाव हो जाता हैं। दोनों ही हालात में बर्फ या ठंडे पानी से चोट की जगह सिकाई करने पर प्रायः फोड़ा नहीं बन पाता। जब चोट पुरानी हो जाती हैं तो गर्म पानी से सिकाई करना लाभदायक होता हैं। खुली हुई चोट यदि साधारण हो तो उसे साफ करके कोई भी एन्टीसेप्टिक क्रीम लगाना चाहिए। यदि खून बह रहा हो तो टिंचर बैन्जोइन लगाना फायदेमंद हैं। किसी भी घाव को बिना इलाज के छोड़ना खतरनाक हो सकता है। इसलिये साफ कर उसका साधारण इलाज करना चाहिये। यदि घाव बड़ा हो, खून रिस रहा हो या पीव आ रहा हो तो चिकित्सक से अवश्य सलाह लेनी चाहिये।

4. *जलना व फफोले पड़ना:* सबसे पहले आग बुझाकर जले हुए भाग पर ठंडा पानी डालना चाहिए। ठंडे पानी से जलन कम हो जाती हैं। बाद में जैतून का तेल व नारियल के तेल का लेप लगाना चाहिए। जले हुए भाग पर चूने का पानी एवं अलसी का तेल बराबर भाग में मिलाकर लगाना चाहिए जो अति लाभदायक हैं। घावों को रगड़ने से बचाना चाहिए एवं अविलम्ब पशुचिकित्सक को खबर देनी चाहिए।

Scanned with OKEN Scanner

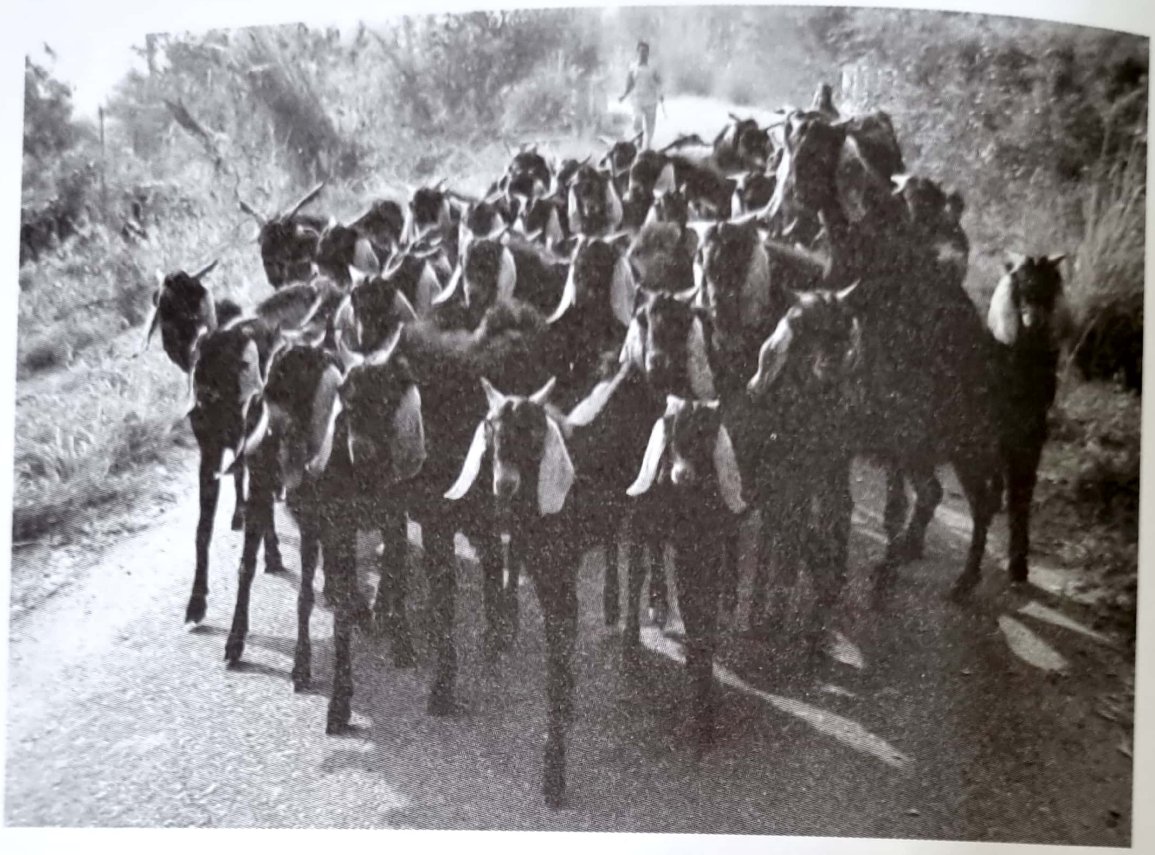

संरक्षण एवं निर्देशनः	डा. त्रिवेणी दत्त संयुक्त निदेशक (प्रसार शिक्षा), भारतीय पशुचिकित्सा अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर–243 122 (उ.प्र.)
सम्पादकः	डा. (श्रीमती) रुपसी तिवारी वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं प्रभारी, कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केन्द्र, भारतीय पशुचिकित्सा अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर–243 122 (उ.प्र.)
प्रकाशकः	डा. महेश चन्द्र शर्मा निदेशक व कुलपति, भारतीय पशुचिकित्सा अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर–243 122 (उ.प्र.) के निमित्त प्रभारी अधिकारी, संचार केन्द्र द्वारा प्रकाशित
संस्करणः	2010
मुद्रकः	बाइट्स एण्ड बाइट्स, बरेली फोनः 94127 38797

INDIAN VETERINARY RESEARCH INSTITUTE
Izatnagar-243 122 (UP) INDIA
Phone: +91-581-2300096 (O); +91-581-2302231 (R)
Fax: +91-581-2303284; E.mail: dirivri@ivri.up.nic.in
Website: www.ivri.nic.in; Gram: VETEX
Kisan Call Center: 1800-180-1551; Helpline: +91-581-2311111

Scanned with OKEN Scanner